SNEH TEACHERS TRAINING COLLEGE, JAIPUR
"Foster Emotional Intelligence in Youth Through Education" (ICFEIYE-2024)
DATE: 15 April 2024
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double-Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal, Impact factor (SJIF) = 7.938

चित्रपट संगीत में पार्श्वगायन परम्परा का उद् भव और विकास

Dr. Lalit Kumar, Assistant Professor of Music (Inst.), Govt. College, Chhachhrauli (Yamunanagar)

संगीत आदि काल से ही अतिरिक्त संवेदनाओं एवं भावनाओं की अभिव्यक्ति का एक प्रमुख माध्यम रहा है। इसके अतिरिक्त नृत्य, नाटक, चित्रकला, मूर्तिकला और कविता एवं भाषा आदि माध्यमों से मानव ने अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति की। कालान्तर में ये ही माध्यम विशिष्ट कलाओं के रूप में प्रतिष्ठित हुए। इन कलाओं में संगीत का प्रमुख स्थान है। विद्वानों ने संगीत को एक रसवन्ती धारा की उपमा दी है। 'लहलहाते खेतों को देखकर जब किसानों के हृदय में हर्ष की तरंगे उठती रहती हैं तब स्वाभाविक रूप से उनके गले से स्वर लहरियाँ फूट पड़ती हैं, क्योंकि उनका जीवन, उस फसल के साथ जुड़ा हुआ है। गांव की चौपालों पर ढ़ोलक-मंजीरे की लय में तल्लीन ग्रामीणों का मन, सजह भाव से गुनगुनाने लगता है, क्योंकि ढ़ोल-मंजीरे की धुन उनके दिन भर के कष्टों को भुला देती है। समुद्र की लहरों के बीच नौका खेता हुआ मल्लाह भी अपना श्रम-परिहार करने के लिए ऊंची आवाज़ में गाना अपने स्वाभाविक जीवन का हिस्सा समझता है। संगीत की स्वर-लहरियों के साथ ही तो वह, यह दुष्कर कार्य कर पाता है। ऐसे ही कई क्रिया-कलापों के साथ भी संगीत सहजता से गुंथा हुआ दिखाई पड़ता है।[1] पार्श्व संगीत भी संगीत का एक प्रमुख प्रकार है, जिसकी परम्परा बहुत प्राचीन है। पार्श्व संगीत शब्द का अर्थ है- पीछे का संगीत। ऐसा संगीत जिसका प्रयोग किसी भी रचना और कार्यक्रम में प्रत्यक्ष रूप से न होकर अप्रत्यक्ष रूप से होता है, उसे पार्श्व संगीत कहते हैं। एक अन्य परिभाषा के अनुसार ''किसी भी प्रकार के कार्यक्रम एवं रचना आदि में विभिन्न भावों की उत्पत्ति के लिए हम संगीत के जिस रूप का अप्रत्यक्ष रूप से व्यवहार करते हैं, उसे पार्श्व संगीत कहा जाता है।'' भरत काल में 'पार्श्व' शब्द का उल्लेख कहीं नहीं मिलता, इस शब्द के स्थान पर 'नेपथ्य' शब्द का प्रयोग मिलता है। वर्तमान में 'नेपथ्य संगीत' को ही 'पार्श्व संगीत' कहा जा सकता है। प्राचीन भारतीय संस्कृत नाटकों एवं विभिन्न ग्रन्थों में 'नेपथ्य' शब्द का व्यवहार परदे के पीछे के स्थान अथवा मंच के किसी अदृश्य भाग के लिये किया गया है। इसके अतिरिक्त मंच के उस भाग को भी नेपथ्य कहा गया है, जिस भाग में कलाकार अपना रूप उभारते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि 'नेपथ्य' शब्द की पहचान इस अर्थ में नाट्यशास्त्र तथा संस्कृत नाटकों के कारण ही हुई है। प्राचीन काल से ही जनसाधारण को गायन, वादन एवं नृत्य इन तीनों कलाओं द्वारा आनंदित करने की परम्परा रही है। ये तीनों अंग स्वयं में स्वतंत्र हैं परन्तु गायन और नृत्य में जब वादन का समावेश होता है तो अभिव्यक्ति अधिक मनोरंजक हो जाती है क्योंकि गायन का प्राण है ताल और ताल का आधार है वाद्य। वाद्यों की ध्वनियाँ भय, द्वन्द, चिन्ता, चंचलता, दृढ़ता आदि भावों को व्यक्त करने में अत्यधिक सक्षम होती हैं।

पार्श्व संगीत का अर्थ एवं परिभाषा

'नेपथ्य' शब्द का प्रयोग कालिदास आदि नाटककारों ने भी किया है। कालिदास ने नाटक में विभिन्न प्रकार की सूचना देने तथा विभिन्न प्रकार के भावों की उत्पत्ति के लिए 'नेपथ्य' से सुनाई देने वाले कथनों एवं संगीत का उल्लेख किया है। वस्तुत: कालिदास ने संगीत के साथ-साथ विभिन्न प्रकार की सूचना आदि देने को भी 'पार्श्व' अथवा 'नेपथ्य' संगीत के अन्तर्गत रखा है। 'मालविकाग्निमित्रं' नामक नाटक के संदर्भ में उल्लेख मिलता है कि मंच पर उपस्थित पात्रों को मृदंग की ध्वनि के माध्यम से नृत्य करने का संदेश दिया जाता था। इस प्रकार 'नेपथ्य' शब्द का अर्थ वृहद जान पड़ता है। आधुनिक काल में यदि हम पार्श्व संगीत की परिभाषा करते हैं, तो यही कहना उचित होगा कि चलचित्रों और नाटकों आदि में विभिन्न भावों एवं रसों आदि की अभिव्यक्ति के लिए हम अप्रत्यक्ष रूप से जिस संगीत का प्रयोग करते हैं, उसे 'पार्श्व संगीत' कहते हैं। इसकी एक अन्य

परिभाषा भी हो सकती है। किसी नाटक अथवा चलचित्र आदि में किसी विशिष्ट घटना के भाव को उत्पन्न करने के लिए जब किसी गायक, गायिकाओं और वाद्यों के माध्यम से दर्शकों अथवा श्रोताओं के समक्ष अप्रत्यक्ष रूप से संगीत का प्रयोग किया जाता है तो उसे 'पार्श्व संगीत' कहते हैं। इसी प्रकार फिल्मों अथवा चलचित्रों के दृश्यों को प्रभावी बनाने के लिए जिस संगीत का प्रयोग किया जाता है, उसे 'पार्श्व संगीत' कहा जा सकता है। इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने 'पार्श्व संगीत' की व्यवहारिकता के अनुरूप अलग-अलग परिभाषाएं दी हैं। किन्तु इन सभी परिभाषाओं से यही कहा जा सकता है कि 'पार्श्व संगीत' ऐसा संगीत है जिसका व्यवहार परदे और मंच पर प्रत्यक्ष रूप से न होकर पीछे से अथवा अप्रत्यक्ष रूप से होता है, उसे 'पार्श्व संगीत' कहते हैं।

निष्कर्षत: 'पाश्र्व संगीत' को ही 'पृष्ठभूमि संगीत' भी कहा जा सकता है। 'पृष्ठभूमि संगीत' से अभिप्राय: उस संगीत से है जिसका प्रयोग हम प्रत्यक्ष रूप से न करके अप्रत्यक्ष रूप से विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति के लिए करते हैं। इस संगीत का प्रयोग प्राचीन काल से ही हमारी सांस्कृतिक अथवा सांगीतिक परम्परा में किया जाता रहा है। नाट्यशास्त्र में 'ध्रुवगान' नामक एक सांगीतिक विधा का वर्णन मिलता है। ध्रुवगान का अर्थ है, वह गान अथवा संगीत जिसका प्रयोग हम नाट्य में विशिष्ट भाव अथवा रस को प्राप्त करने अथवा निष्पत्ति के लिए करते हैं। वर्तमान में ध्रुवगान प्रचार में नहीं है, परन्तु यदि आज के पृष्ठभूमि अथवा पाश्र्व संगीत को 'ध्रुवगान' का ही परिवर्तित एवं संवर्धित रूप कहा जाए तो मिथ्या न होगा। आजकल पृष्ठभूमि संगीत का प्रयोग रेडियो, दूरदर्शन, सिनेमा और नाटक आदि में बहुधा किया जाता है। सही अर्थों में पाश्र्व संगीत के अभाव में किसी विशिष्ट कार्यक्रम में विशिष्ट भाव को उत्पन्न करना कठिन ही नहीं नामुमकिन है। दूरदर्शन में तो पाश्र्व संगीत का प्रयोग अति महत्वपूर्ण है। दूरदर्शन पर जितने भी कार्यक्रमों का प्रसारण होता है, उन सब में पाश्र्व संगीत अवश्य होता ही है।

Of Work... Never Ended...

आधुनिक संदर्भ में 'किसी पात्र का गाना अथवा बजाना जो वह वास्तव में प्रत्यक्ष रूप से स्वयं न गाये अथवा बजाए बल्कि पर्दे की आड़ में रहकर गाये अथवा बजाए तो उसे नेपथ्य या पार्श्वगायन अथवा पार्श्व संगीत कहते हैं। अंग्रेजी में इसे प्लेबैक सिंगिंग अथवा प्लेबैक म्यूजिक या बैकग्राउंड म्यूजिक कहते हैं। पाश्र्व संगीत, संगीत के उस प्रकार को कहते हैं जो दर्शकों अथवा श्रोताओं के समक्ष प्रत्यक्ष नहीं बजाया जाता बल्कि गायक-गायिकाओं के साथ संगत के लिये अथवा भावपूर्ण घटनाओं अथवा गीत की भावनाओं को प्रभावी बनाने हेतु बजाया जाता है। इस संगीत का प्रभाव अप्रत्यक्ष रीति से श्रोताओं पर पड़ता है। इसी कारण इसे पाश्र्व संगीत (Background Music) कहा जाता है। फ़िल्म के विभिन्न दृश्यों को प्रभावोत्पादक बनाने के लिये स्थिति और भाव के अनुसार जो संगीत दिया जाता है वह पाश्र्व संगीत कहलाता है।

पाश्र्व संगीत अथवा गायन परम्परा का आविर्भाव

गान की सहज प्रवृत्ति के विकास में सर्वप्रथम गुनगुनाना, तत्पश्चात् सार्थक शब्द समूहों को दो-चार स्वरों में गाना और फिर स्वर, शब्द और लय को सामूहिक रूप से प्रस्तुत करने का विकासात्मक क्रम दिखाई देता है। विकासवादी विचारधारा के प्रवर्तक डार्विन के अनुसार वैज्ञानिक निरीक्षण के आधार पर यह सिद्ध हुआ है कि पशु-पक्षियों की ध्वनि में भी स्वरों के अंतराल पाए जाते हैं, जिनका प्रयोग वे निराशा, भय, क्रोध, विजय और आनन्द आदि भावों को प्रकट करने के लिए करते हैं। भारतीय मनीषियों ने संगीत की इसी भावनात्मक प्रकृति को ध्यान में रखते हुए भावों की अभिव्यक्ति के लिए इस कला का प्रयोग करना आरम्भ किया। गहन अध्ययन से ज्ञात होता है कि संगीत और पाश्र्व संगीत का उद्भव एक ही समय हुआ है, परन्तु संगीत के इस रूप अथवा प्रकार को मान्यता नाटक आदि में व्यवहृत होने के बाद ही प्राप्त हो पाई। भारतीय परम्परा में पाश्र्व संगीत को पहचान दिलाने में कालिदास, भास और शूद्रक जैसे नाटककारों और भरत जैसे मुनियों एवं मनीषियों का महत्वपूर्ण योगदान है। इन्हीं के माध्यम से पाश्र्व संगीत परम्परा विकसित हुई। संगीत और पाश्र्व संगीत के प्रयोग के प्रमाण वैदिक काल से मिलते हैं। किन्तु इस आरम्भिक काल में इसे पाश्र्व संगीत न

कहकर 'नेपथ्य' का संगीत कहा गया है। नेपथ्य संगीत का वर्णन अन्य कई ग्रंथों में भी मिलता है। नि:संदेह संगीत के इस रूप का उल्लेख अथवा व्यवहार किसी न किसी रूप में हमारे संगीत एवं सांस्कृतिक परम्परा में प्राचीन काल से ही होता आ रहा है।

वैदिक साहित्य में कई उल्लेखों में यजमान की पत्नी द्वारा साम-गान गाते हुए वीणा की संगति करने का उल्लेख है। "तैत्तिरीय संहिता' के अनुसार महाव्रत नाम सोमयोग में सामगायक उद्गाता जब 'भद्र' नामक साम का गान करते थे, तब यजमान की पत्नी अपने कंठ स्वर से उनकी संगति करती थी। हिरण्य केशी सूत्र में प्राप्त उल्लेखानुसार साम-गान के साथ यजमान की पत्नियां अपघाटलिका, अघाटी, पिच्छोला, कर्कटिका, स्तम्बलवीणा, तालुकवीणा, काण्डवीणा, अलाबु तथा कपिशीषणी वीणा वादन करने के साथ गाते हुए संगति करती थीं। "लाट्यायन सूत्र में यजमान की पत्नी को निर्देशित किया गया है कि वह उपगायन के पश्चिम भाग में बैठकर बारी-बारी से काण्डवीणा एवं पिच्छोला को उलट-उलट कर बजाये और सामगायक की संगति करें, मुख से फूंककर पिच्छोला बजायें।यद्यपि वर्तमान में साम गान के साथ किसी वाद्य का वादन नहीं होता है, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में सामवेद के साथ वीणा वादन होता था। इस प्रकार वैदिक काल में सामगान तथा अन्य ऐसे धार्मिक अवसरों पर गीत-संगीत एवं नृत्य के साथ विभिन्न प्रकार के वाद्यों के वादन की परम्परा थी। गान के साथ वाद्य की संगति भी एक प्रकार का पार्श्व संगीत ही है। यह माना जा सकता है कि प्राचीन काल में पार्श्व अथवा सहयोगी संगीत की ऐसी ही परम्परा थी। कालान्तर में आवश्यकता एवं रूचि के अनुसार इसमें परिवर्तन एवं संवर्धन होते रहे और आज वही परम्परा पार्श्व संगीत के रूप में हमारे सामने व्यवहार में है।

भरत नाट्यवेद के आद्य आचार्य हैं। इन्हें नाट्यवेद की शिक्षा ब्रह्मा से मिली। उन्होंने अपने पुत्रों को उनकी योग्यता के अनुसार नाट्य के अंगों की शिक्षा दी। आत्रेय इत्यादि ऋषियों ने भरत से ही नाट्यवेद का श्रवण किया। महर्षि भरत ने नाट्य के समस्त अंगों पर विचार किया तथा संगीत के मूलभूत सिद्धांतों का विवरण वैज्ञानिक ढंग से प्रतिपादित किया। 'भरत के नाट्यशास्त्र' में चित्रा, विपंची आदि वीणाओं का उल्लेख है। भरत की वीणा को मत्तकोकिला कहा गया है। यदि नाट्य परम्परा का सूक्ष्म अध्ययन किया जाए तो यह ज्ञात होता है कि संगीत प्रारंभ से ही नाट्य का अभिन्न एवं प्रमुख अंग रहा है। भरत ने नाटक के दृश्यों में संगीत का भिन्न प्रकार से व्यवहार करने का विधान बताया है। नाट्यशास्त्र में 'ध्रुव गान' नामक संगीत की एक विधा का उल्लेख हुआ है। इस सांगीतिक विधा का प्रयोजन नाट्य के भावों की अभिव्यक्ति में सहायक होता था। वस्तुत: ध्रुव संगीत का व्यवहार नाट्य आदि में विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति के लिए होता था। इस प्रकार के संगीत को ही नेपथ्य और पार्श्व संगीत के नाम से अभिहित किया गया। नाट्य के इस महान ग्रन्थ में नेपथ्य और पार्श्व संगीत का विस्तृत रूप से उल्लेख हुआ है।

उन्नीसवीं सदी में ब्रिटिश शासन काल में भारतीय संगीत में अनेक पाश्चात्य वाद्यों का प्रवेश हुआ। हारमोनियम, वायलिन, मैण्डोलियन आदि वाद्यों के प्रयोग में भारतीय संगीतज्ञों ने बड़ी रूचि दर्शाई तथा उन पर भारतीय संगीत रचनाएं रची जाने लगी। वर्तमान में तो लगभग सभी फिल्मी संगीत रचनाओं में पाश्चात्य वाद्यों का प्रयोग होता है, साथ ही उनकी वादन शैली का अनुसरण भी स्पष्ट रूप से मिलता है। ब्रिटिश प्यानों, ऑरगन और जलतरंग आदि अनेक वाद्य अपने साथ भारत लाए। इस प्रारम्भिक दौर में चलचित्रों में पार्श्व संगीत अथवा संगीत को एक आवश्यक तत्त्व के रूप में जोड़ने का कार्य जिन दो महान हस्तियों ने किया उनमें पहला नाम अमेरीका के 'बी. डब्ल्यू ग्रिफ्थ' का है। ग्रिफ्थ को संगीत का अच्छा ज्ञान था किन्तु वे स्वयं एक अच्छे रचनाकार नहीं थे। अत: उन्होंने दूसरे रचनाकारों की सहायता से अपनी फिल्मों के लिए संगीत की स्वरलिपियाँ तैयार की। उनका ध्येय फिल्मों में पार्श्व संगीत को जोड़ना था। इसी परम्परा में व्यवहारिक तौर पर विचार करने वाले दूसरे विचारक 'आइजैंस्टाइन' माने जाते हैं। इन्होंने अपनी एक फ़िल्म के लिए जर्मन संगीतज्ञ 'एडमंड

SNEH TEACHERS TRAINING COLLEGE, JAIPUR
"Foster Emotional Intelligence in Youth Through Education" (ICFEIYE-2024)
DATE: 15 April 2024
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double-Blind, Open Access, Peer-Reviewed,
Refereed-International Journal, Impact factor (SJIF) = 7.938

माइज़ेल' से पार्श्व संगीत तैयार करवाया। मूक फ़िल्म होने पर भी यह संगीत काफी प्रभावशाली सिद्ध हुआ।

पार्श्व संगीत के वर्तमान स्वरूप की संकल्पना मूल रूप से पाश्चात्य सांगीतिक परम्परा एवं वाद्यों पर ही आधारित है। सत्रहवीं शताब्दी के पाश्चात्य जगत में वाद्यवृन्द समूहों का स्वरूप निर्मित हो चुका था। इस परम्परा का भी पार्श्व संगीत में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसी सदी में वाद्यों से उत्पन्न होने वाले भावों, रसों एवं उनकी प्रयुक्ति के विषय में पर्याप्त प्रगति हुई। मान्यता है कि पाश्चात्य परम्परा में पार्श्व संगीत का प्रयोग प्रथम बार किसी न किसी रूप में 'ऑपेरा' में होना शुरू हुआ। भारत में सर्वप्रथम नौशाद साहब ने पाश्चात्य वाद्यों का प्रयोग फ़िल्म 'जादू' में किया था। इस फ़िल्म का निर्माण वर्ष 1951 हुआ था। पार्श्व संगीत में मैंडोलियन और बांसुरी को प्रमुखता दिलाने का श्रेय भी इन्हें ही जाता है। इस प्रकार पार्श्व संगीत की यह परम्परा वैदिक काल से आरम्भ होकर नाट्यशास्त्र ग्रंथ तथा कालिदास, भास और शुद्रक जैसे महान नाटककारों के नाटकों में व्यवहृत होते हुए आधुनिक युग तक पहुंची। कालान्तर में यह परम्परा सिनेमा अथवा फिल्मों का एक प्रमुख अंग बन कर उभरी। वर्तमान में पार्श्व संगीत नाटक और सिनेमा सहित लगभग सभी प्रकार के दृष्य और श्रव्य कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण भाग बन चुकी है। दूरदर्शन में धारावाहिकों, विज्ञापनों, सूचना सम्बन्धी कार्यक्रमों और अन्य लगभग सभी प्रकार के कार्यक्रमों में पार्श्व संगीत का व्यवहार एक आवश्यक तत्त्व के रूप में हो रहा है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:-

1. प्रो. बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, पूर्वोक्त, अध्याय-32, श्लो. 493, पृ. 338
2. डॉ. कविता चक्रवर्ती, भारतीय संगीत में वाद्यवृन्द, जोधपुर, 1990, पृ. 35
3. तुलसी राम देवांगन, भारतीय संगीत शास्त्र, पृ. 24
4. लक्ष्मीनारायण गर्ग, हमारे संगीत रत्न, हाथरस, 1920, पृ. 74
5. डॉ. उमा गर्ग, संगीत का सौंदर्य बोध, पृ. 54
6. रामचन्द्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पृ. 33
7. डॉ. बिमल, हिन्दी चित्रपट एवं संगीत का इतिहास, पृ. 58

iajesm Quality Of Work... Never Ended...